प्रज्ञापुरुष पं० जगन्नाथजी उपाध्याय की दृष्टि में बुद्ध "व्यक्ति" नहीं "प्रक्रिया" (एक संस्मरण)

- प्रो० सागरमल जैन
- डॉ० रमेश चन्द्र गुप्त

मेरे शोध-छात्र श्री रमेशचन्द्र गुप्त "तीर्थंकर, बुद्ध और अवतार की अवधारणा" पर शोध कार्य कर रहे थे। हम लोगों के सामने मुख्य समस्या थी कि ईश्वर और आत्मा की सत्ता को अस्वीकार करने वाले क्षणिकवादी बौद्ध दर्शन में बुद्ध, बोधिसत्व और त्रिकाय की अवधारणाओं की संगतिपूर्ण व्याख्या कैसे सम्भव है ? जब किसी नित्य आत्मा की सत्ता को ही स्वीकार नहीं किया जा सकता है, तो हम कैसे कह सकते हैं कि कोई व्यक्ति बुद्ध-बनता है। पुनः जब आत्मा ही नहीं है तब बोधिचित्त का उत्पात किसमें होता है ? पुनः बौद्ध दर्शन यह भी मानता है कि प्रत्येक सत्व बुद्ध-बीज है, किन्तु जब सत्व की ही क्षण मात्र से अधिक सत्ता नहीं है तो वह बुद्ध-बीज कैसे होगा और कैसे वह बोधिसत्व होकर विभिन्न जन्मों में बोधिपरिमिताओं की साधना करता हुआ बुद्धत्व को प्राप्त करेगा ? यदि सत्ता मात्र क्षण-जीवी है तो क्या बुद्ध का अस्तित्व भी क्षण-जीवी है ?[1]

महासंघिकों ने तो बुद्ध के रूपकाय को भी अमर और उनकी आयु को अनन्त माना है।[2] सद्धर्मपुण्डरीक में भी बुद्ध की आयु अपरिमित कही गई है।[3] किन्तु यदि बुद्ध का रूपकाय अमर और आयु अपरिमित या अनन्त है तो फिर बौद्ध दर्शन की क्षणिकवादी अवधारणा कैसे सुसंगत सिद्ध होगी ?

पुनः बौद्धदर्शन में यह भी माना जाता है कि बुद्ध निर्माणकाय के द्वारा नाना रूपों में प्रकट होकर लोहित के लिए उपदेश करते हैं तो फिर यह समस्या स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होती है कि किसी नित्य-तत्त्व के अभाव में इस निर्माणकाय की रचना कौन करता है ? यदि विशुद्धिमग्ग की भाषा में हम मात्र क्रिया की सत्ता माने, कर्त्ता की नहीं, तो फिर कोई व्यक्ति मार्ग का उपदेशक कैसे हो सकता है ? धर्मचक्र का प्रवर्तन कौन करता है ? वह कौन सा सत्व या चित्त है, जो बुद्धत्व को प्राप्त होता है और परम कारुणिक होकर जन-जन के कल्याण के लिए युगों-युगों तक प्रयत्नशील बना रहता है ? महायानसूत्रालंकार में यह भी कहा गया है कि बुद्ध के तीनों काय, आश्रय और कर्म से निर्विशेष हैं। इन तीनों कायों में तीन प्रकार की नित्यता है, जिनके कारण तथागत नित्य कहलाते हैं।[4] समस्या यह है कि एकान्तरूप से क्षणिकवादी बौद्ध के दर्शन में नित्य त्रिकायों की अवधारणा कैसे सम्भव हो सकती है ?

ये सभी समस्यायें हमारे मानस को झकझोर रही थीं और हम यह निश्चित नहीं कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पा रहे थे कि अनात्मवादी बौद्ध दर्शन के सांचे में इन विसंगतियों का निराकरण कैसे सम्भव हो सकता है ? इस सम्बन्ध में हमने बौद्ध-विद्या एवं दर्शन के विद्वानों से विचार-विमर्श किये परन्तु ऐसा कोई समाधान नहीं मिला जो हमारे मानस को पूर्ण सन्तोष दे सके।

इन्हीं समस्याओं को लेकर हमने अन्ततोगत्त्वा वाराणसी के बौद्धधर्म एवं दर्शन के वरिष्ठ विद्वान् पं० जगन्नाथजी उपाध्याय की सेवा में उपस्थित होने का निश्चय किया और एक दिन उनके पास पहुँच ही गये। हमने उनसे इन समस्याओं के सन्दर्भ में लगभग दो घण्टे तक चर्चा की। इन समस्याओं के सम्बन्ध में उनसे हमें जो उत्तर प्राप्त हुए, उनसे न केवल हमें सन्तोष ही हुआ, बल्कि यह भी बोध हुआ कि पं० जगन्नाथजी उपाध्याय ऐसे बहुश्रुत विद्वान् हैं, जो बौद्धधर्म एवं दर्शन को उसके ही धरातल पर खड़े होकर समझने और उसके सम्बन्ध में उठायी गयी समस्याओं का उसकी ही दृष्टि से समाधान देने की सामर्थ्य रखते हैं। सम्भवतः उनके स्थान पर दूसरा कोई पण्डित होता तो वह इन समस्याओं को बौद्धदर्शन की कमजोरी कहकर अलग हो जाता। किन्तु उन्होंने जो प्रत्युत्तर दिये, वे इस बात के प्रमाण हैं कि उन्होंने निष्ठापूर्वक श्रमण-परम्परा का और विशेष रूप से बौद्ध परम्परा का गम्भीर अध्ययन किया था। यद्यपि नित्य आत्म तत्त्व के अभाव में कर्म-फल, पुनर्जन्म, निर्वाण आदि की समस्याओं का समाधान बौद्धदर्शन के अनात्मवादी और क्षणिक ढांचे में कैसे सम्भव है ? इस समस्या के समाधान के लिए प्रो० हिरियन्ना ने अपने ग्रन्थ "भारतीय दर्शन के मूलतत्त्व" (Elements of Indian Philosophy) में किसी सीमा तक एक समाधान देने का प्रयत्न किया है। किन्तु पण्डित जगन्नाथजी उपाध्याय ने बुद्धत्व की समस्याओं का इसी दृष्टि से जो समाधान प्रस्तुत किया उसके आधार पर वे निश्चित ही बौद्ध दर्शन के प्रत्युत्पन्नमति के श्रेष्ठ दार्शनिक कहे जा सकते हैं, क्योंकि "बुद्ध" की अवधारणा के सन्दर्भ में उपर्युक्त समस्याओं का समाधान न तो हमें ग्रन्थों से और न विद्वानों से प्राप्त हो सका था। उपर्युक्त समस्याओं के सन्दर्भ से प्रज्ञापुरुष पं० जगन्नाथजी उपाध्याय ने जो समाधान दिये थे, उनकी भाषा चाहे आज हमारी अपनी हो, परन्तु विचार उनके ही हैं। वस्तुतः हम उनकी ही बात अपनी भाषा में व्यक्त कर रहे हैं -- यदि हमें इस बात का जरा भी एहसास होता कि इतने सुन्दर समाधान प्राप्त होंगे और पं० जी हम लोगों के बीच से इतनी जल्दी विदा हो जायेंगे ? तो हम उनकी वाणी को रिकार्ड करने की पूर्ण व्यवस्था कर लेते। किन्तु आज हमारे बीच न तो वह प्रतिभा है और न इस सम्बन्ध में उनके शब्द ही हैं। फिर भी हम जो कुछ लिख रहे हैं, वह उनका ही कथन है। यद्यपि प्रस्तुतीकरण की कमी हमारी अपनी हो सकती है।

उनका कहना था कि बुद्धत्व की अवधारणा के सन्दर्भ में आपके द्वारा प्रस्तुत इन सभी असंगतियों का निराकरण चित्तसन्तति या चित्तधारा के रूप में किया जा सकता है। हम बुद्ध को व्यक्ति न मानें, अपितु परार्थ क्रियाकारित्व की एक प्रक्रिया मानें। बुद्ध एक नित्य-व्यक्तित्व (An Eternal Personality) नहीं, अपितु एक प्रक्रिया (A Process) है। बुद्ध के जो तीन या चार काय माने गये हैं, वे इस प्रक्रिया के उपाय या साधन हैं। धर्मकाय की नित्यता की जो बात कही गयी है, वह स्थितिगत नित्यता नहीं अपितु क्रियागत नित्यता है। जिस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार नदी का प्रवाह युगों-युगों तक चलता रहता है यद्यपि उसमें क्षण-क्षण परिवर्तन और नवीनता होती रहती है। ठीक उसी प्रकार बुद्ध या बोधिसत्व भी एक चित्तधारा है, जो उपायों के माध्यम से सदैव परार्थ में लगी रहती है।

बुद्ध के सन्दर्भ में जो त्रिकायों की अवधारणा है उसका अर्थ यह नहीं कि कोई नित्य आत्मसत्ता है, जो इन कायों को धारण करती है। वस्तुतः ये काय परार्थ के साधन या उपाय हैं। जिस चित्तधारा से बोधिचित्त का उत्पाद होता है, वह बोधिचित्त इन कायों के माध्यम से कार्य करता है। बुद्धत्व कोई व्यक्ति नहीं है, अपितु वह एक प्रक्रिया (A Process) है। धर्म की नित्यता मार्ग की नित्यता है। धर्म भी कोई वस्तु नहीं, अपितु प्रक्रिया है। जब हम धर्मकाय की नित्यता की बात करते हैं, तो वह व्यक्ति की नित्यता नहीं अपितु प्रक्रिया विशेष की नित्यता है। धर्मकाय नित्य है, इसका तात्पर्य यही है कि धर्म या परिनिर्वाण के उपाय नित्य हैं। बौद्धदर्शन में कायों की इस अवधारणा को भी हमें इसी उपाय प्रक्रिया के रूप में समझना चाहिए। ऐसा नहीं मानना चाहिए कि कोई नित्य आत्मा है, जो इन्हें धारण करती है। अपितु इन्हें परार्थक्रियाकारित्व के उपायों के रूप में समझना चाहिए और यह मानना चाहिए कि परार्थक्रियाकारित्व ही बुद्धत्व है।

बुद्ध के त्रिकायों के नित्य होने का अर्थ इतना ही है कि परार्थक्रियाकारित्व की प्रक्रिया सदैव-सदैव रहती है। वह चित्त जिसने लोकमंगल का संकल्प ले रखा है, जब तक वह संकल्प पूर्ण नहीं होता है, अपने इस संकल्प की क्रियान्विति के रूप में परार्थ-क्रिया करता रहता है। साथ ही वह संकल्प लेने वाला चित्त भी आपकी, हमारी या किसी की भी चित्तधारा की सन्तान हो सकता है। क्योंकि सभी चित्तधाराओं में बोधिचित्त के उत्पाद की सम्भावना है। इसी आधार पर यह कहा जाता है कि सभी जीव बुद्ध-बीज हैं। महायान में जो अनन्त बुद्धों की कल्पना है, वह कल्पना भी व्यक्ति की कल्पना नहीं, अपितु प्रक्रिया की कल्पना है। क्योंकि यदि प्रक्रिया को सतत् चलना है तो हमें अनन्त बुद्धों की अवधारणा को स्वीकार करना होगा। यदि प्रत्येक चित्तधारा में बोधिचित्त के उत्पाद की सम्भावना है, तो ऐसी स्थिति में बोधिचित्त एक नहीं अनेक भी हो सकते हैं। वस्तुतः बुद्ध के सम्बन्ध में जो एकत्व और अनेकत्व के सन्दर्भ उपलब्ध हैं, वे भी कोई विरोधाभास प्रस्तुत नहीं करते। प्रक्रिया के रूप में बुद्ध एक है, किन्तु प्रक्रिया के घटकों के रूप में वे अनेक भी हैं। बुद्ध अनेक रूपों में प्रकट होते है इसका तात्पर्य यह नहीं कि कोई व्यक्ति अनेक रूपों में प्रकट होता है, अपितु यह कि लोकमंगलकारी चित्तधारा, जो एक प्रक्रिया है, अनेक रूपों में प्रकट होती हुई अनेक रूपों में लोकमंगल करती है। बुद्ध के द्वारा अनेक सम्भोगकाय धारण करने का मतलब यह है कि बोधिचित्तधारा के अनेक चित्तक्षण अनेकानेक उपायों से लोकहित का साधन करते हैं। महायान परम्परा में बोधिचित्त के इस संकल्प का, कि जब तक समस्त प्राणी निर्वाण लाभ न कर लें या दुःख से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक मैं लोक-मंगल के लिए सतत् प्रयत्नशील रहूँगा, तात्पर्य यह है कि चित्त-संतति की धारा सतत् रूप से लोकमंगल में तत्पर रहने का निर्णय लेती है और तदनुसार अपनी चित्तसंतति के प्रवाह को बनाये रखती है। पुनः बुद्ध के सन्दर्भ में जो यह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा जाता है कि बुद्ध न तो निर्वाण में स्थित हैं और न संसार में। इसका कारण यह है कि महायान परम्परा में बुद्ध के दो प्रमुख लक्षण माने गये हैं -- प्रज्ञा और करुणा। प्रज्ञा के कारण बोधिचित्त संसार में प्रतिष्ठित नहीं होता। दूसरे शब्दों में प्रज्ञा उन्हें संसार में प्रतिष्ठित नहीं होने देती। (कोई भी प्रज्ञायुक्त पुरुष दुःखमय संसार में रहना नहीं चाहेगा), किन्तु दूसरी ओर बुद्ध अपने करुणा- लक्षण के कारण निर्वाण में भी प्रतिष्ठित नहीं हो पाते। उनकी करुणा उन्हें निर्वाण में भी प्रतिष्ठित नहीं होने देती, क्योंकि कोई भी परमकारुणिक व्यक्तित्व दूसरों को दुःखों में लीन देखकर कैसे निर्वाण में प्रतिष्ठित रह सकता है।

अतः बोधिचित्त न तो वे निर्वाण प्राप्ति के कारण निष्क्रिय होते हैं और न लोकमंगल करते हुए भी संसार में आबद्ध होते हैं। यह बोधिचित्त भी व्यक्ति नहीं प्रक्रिया ही होता है जो निर्वाण को प्राप्त करके भी लोकमंगल के हेतु सतत् क्रियाशील बना रहता है और यही लोकमंगल के क्रियाशील बोधि प्राप्त चित्त सन्तति ही बुद्ध या बोधिसत्व है। अतः बुद्ध नित्य-व्यक्तित्त्व नहीं अपितु नित्य प्रक्रिया है और बुद्ध की नित्यता का अर्थ लोकमंगल की प्रक्रिया की नित्यता है।

सन्दर्भ

1. द्रष्टव्य -- तीर्थंकर, बुद्ध और अवतार, सम्पादक - डॉ० सागरमल जैन, लेखक डॉ० रमेश चन्द्र गुप्त, प्रकाशक -- पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी-5, पृ० 169-172
2. द्रष्टव्य -- बौद्धधर्म के विकास का इतिहास, पृ० 341
3. सद्धर्मपुण्डरीक, पृ० 206-207
4. महायानसूत्रालंकार, पृ० 45-46

***

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org